"भगवान महावीर की जन-जीवन को देन"

(डॉ. शोभनाथ पाठक)

अतीत के आलोक में भगवान महावीर के पांचव्रतों (सत्य, अहिंसा, अस्तेय, अपरिग्रह और ब्रह्मचर्य) के सम्बल ने उस युग को इतना संवारा कि हिंसा को अहिंसा का दिशा निर्देश मिला, पाप को पुण्य के परखने की क्षमता मिली, और असत्य को सत्य के समझने की सीख मिली । अनेक आततायी, तथा असामाजिक तत्व, दुष्कर्मों को त्याग कर सत्कर्मों की ओर उन्मुख हुए । भगवान महावीर के आदर्श और उपदेश सामाजिक कल्याण के लिए उस युग में जितने उपयोगी थे उससे कहीं अधिक आज उनकी आवश्यकता है ।

तथ्यतः आज के वैज्ञानिक-विकास तथा भौतिकता के भटकाव में उलझी मानसिकता भले ही कृत्रिम साधनों की उपलब्धि से क्षणिक संतोष की अनुभूति करे किंतु रासायनिक अस्त्र, शस्त्रों की दौड़ तथा स्वार्थ और वैभव विलास की बढ़ती भावना मनुष्य को कहाँ ले जायेगी यह सब सोचकर रोमांच हो जाता है । आज-कल जो हिंसा की नई लहर चारों ओर फैल रही है कि निर्दोष लोगों को सरेआम मार दिया जाता है, यह निर्ममता की प्रवृत्ति अत्यधिक निन्दनीय है । अतः आज भगवान महावीर के आदर्श और उपदेश समस्त संसार के लिए वरदान स्वरूप हैं । अब केवल भारतीय समाज के लिए ही नहीं, वरन विश्व के समस्त जीवों के लिए भगवान महावीर के उपदेशों का प्रसार अति आवश्यक हो गया है ।

आज के हिंसा पूर्ण माहोल में जहाँ किसी का जीवन सुरक्षित नहीं है भगवान महावीर का यह उद्‌बोधन कितना उपयोगी सिद्ध हो सकता है जिसे आंकना आसान नहीं है, यथा :

सव्वे पाणा पियाउया,

सुहसाया दुक्खपडिकूला अप्पियवहा ।

पियजीविणो जीविउकामा

सव्वेसिं जोवियं पियं । (आचा. - सूत्र)

अर्थात् सभी प्राणियों को अपने अपने प्राण प्रिय हैं । सब सुख चाहते हैं, दुःख सहन करना कोई भी नहीं चाहता । सुखी जीवन जीने की सबकी अभिलाषा होती है, फिर किसी अन्य की हत्या करने या कष्ट पहुँचानें की ओर मनुष्य क्यों प्रवृत्त होता है ? क्या उसे किसी अन्य के पीड़ित करने में संकोच नहीं होता - दया नहीं आती ? आखिर पाषाण हृदय न पसीजने का कारण क्या है ? यह समाज के लिए एक चुनौती है ।

भगवान महावीर ने अहिंसा को सर्वोच्च प्राथमिकता देकर सभी प्राणियों के प्राण बचाने का आव्हान करते हुए लोगों को उपदेश दिये कि -

तत्थिमं पढमं ठामं, महावीरेण देसियं ।

अहिंसा निउणा दिट्ठा - सव्वभूएसु संजमो ।

जावन्ति लोए पाणा - तस्य अदुव थावरा,

लजाणमजाणं वा, न हणे नो वि घावए ।। (दश वै. सूत्र)

प्रत्येक प्राणी को सबसे अधिक प्रिय उसका प्राण होता है उसे गंवाना वह किसी कीमत पर पसंद नहीं करता फिर ऐसे अनमोल प्राणों को किसी को लूटने का क्या अधिकार है ? तात्पर्य यह है कि प्रत्येक प्राणी की रक्षा करना, मनुष्य का सबसे बड़ा कर्तव्य है फिर भी वह उससे विमुख हो जाता है, आखिर क्यों ? इस प्रकार विश्वकल्याण के लिए भगवान महावीर का दिया हुआ "अहिंसा" महामंत्र अत्यधिक उपयोगी है । इसके प्रचार-प्रसार की आज नितान्त आवश्यकता है ।

दूर संचार के साधनों से जहाँ आज हमें अनेक सुविधाएँ प्राप्त है वहीं अनेक असुविधाएँ भी हैं । आपसी आरोप प्रत्यारोपों से सामाजिक विषमता बढ़ती है कि आज एक देश दूसरे देश, और एक व्यक्ति दूसरे व्यक्तिपर झूठे आरोप लगाकर किसी के जीवन में विष घोलता है । वास्तव में इस प्रवृत्ति को बदलने के लिए भगवान महावीर के "सत्य" सिद्धान्त का सहारा लेना समाज के लिए अत्यधिक उपयोगी है । महावीर ने कहा है कि –

मुसावाओ यह लोगम्मि, सव्वसाहूहि गरिहिओ ।

अविस्सासौ य मूयाणं, तम्हा मोसं विवज्जए ।। (दश. सू.)

संसार के सभी महापुरुषों ने असत्यवादन की घोर निंदा की है, और बड़े से बड़ा विनाश भी असत्य से हुआ है - फिर भी मनुष्य असत्य बोलता है । स्वयं को व समाज को दूषित करता है । कितना आश्चर्य है ? इसलिए महावीर ने हमेशा सत्य ही बोलने की सीख समाज को दी । उन्होंने यहाँ तक कह दिया कि –

"तं सच्चं भयवं" सत्य ही भगवान है ।

तात्पर्य यह है कि सत्य बोलना, ईश्वर की प्राप्ति है हमारे राष्ट्र का प्रतीक भी है "सत्यमेव जयते" अतः सत्य का सहारा ही समाज के लिए श्रेयस्कर है ।

'अस्तेय' का भी महावीर के उपदेशों में प्रमुख स्थान है । सामाजिक विषमता में एक दूसरे की संपत्ति या साधनों का अपहरण, चुराना, या दीनता, विकास की प्रक्रिया में बाधक है इसलिए भगवान महावीर ने कहा है कि -

चित्तमंतयचित्तं का अप्पं वा जइ वा वहं

दंतसोहणमित्तं वि, उग्गहंसि अजाइया ।

विचित्र गति है काल की , जान सका नहीं कोय ।
जयन्तसेन निडर रहो, होनहार सो होय ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तं आप्पणा न गिण्हति, नो वि गिण्हावए परं ॥

अन्नं वा गिण्हमाणंवि, नाणुजाणंति संजया । (दश. सूत्र)

अर्थात् कोई भी वस्तु चाहे सजीव हो अथवा निर्जीव, कम हो या ज्यादा, यहाँ तक ही दांत कुतरनें की सलाई की भांति भी छोटी से छोटी वस्तु क्यों न हो, उसे बिना उसके मालिक से पूछे नहीं छूना चाहिए । यही नहीं बस कोई वस्तु न दूसरों से उठवायें, और न उठानें की प्रेरणा दे । इस प्रकार किसीभी व्यक्ति को किसी का कोई सामान नहीं लेना चाहिए ।

अपरिग्रह की उत्तमता को आंकते हुए संग्रह की प्रवृत्ति को स्वयं के लिए व समाज के लिए घातक बताया गया है भगवान महावीर ने अपरिग्रह के आदर्श को अपनाने का आव्हान करते हुए कहा कि :-

जे पापकम्मेहि घणं मणूसा,

समाययत्ती अमइं गहाय ।

पहाय ते पासपयहिए नरे,

वेराणुवद्धा णरयं उवेत्ति । (उत्त.)

जो मनुष्य धन को अमृत मानकर, अनेकविध पापकर्मों द्वारा धनोपार्जन करता है वह कर्मों के दृढ़ पाश में बंध जाता है और अनेक जीवों के साथ बैरानुबन्ध कर अन्त में सारा धन ऐश्वर्य यहीं पर छोड़ना पड़ता है अतः स्पष्ट होता है कि संग्रहकी प्रवृत्ति दुःखद है ।

भगवान महावीर ने ब्रह्मचर्य की वरीयता को बखानते हुए इसे स्वयं अपने जीवन में उतार कर समाज को अपनाने का आव्हान किया । ब्रह्मचर्य की महत्ता के मान में उन्होंने कहा कि –

"बमचेर उत्तमतव-नियम-नाण-दंसण-चरियसम्मत विणयमूलं"

अर्थात् ब्रह्मचर्य, उत्तम तप, नियम, ज्ञान, दर्शन, चारित्र, संयम और विनय का मूल है । ब्रह्मचर्य की इतनी महिमा है कि –

देवदाणवगंधव्वा जक्खरक्खसकिन्नरा ।

वभयारि नमंसंति, दुक्करं जे करेतिति ॥ (उत्त. सू.)

अत्यन्त दुष्कर ब्रह्मचर्य व्रत की साधना करने वाले, ब्रह्मचारी को देव, दानव, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, किन्नरादि सभी देवी देवता, नमन करते हैं । आज के वैज्ञानिक युग में भी इस ब्रह्मचर्य व्रत की वरीयता को बखानते हुए, मानवता के कल्याण हेतु इसे अपनाने की आवश्यकता पर बल दिया गया हैं ।"

तथ्यतः भगवान महावीर के उपदेशों और आदर्शों को पूर्णतः अपनाने और विश्वस्तर पर प्रचलित-प्रसारित करने की आज नितांत आवश्यकता है । मानवता का मंगल भगवान महावीर के उपदेशों पर चलने से ही संभव है ।

मधुकर-मौक्तिक

वस्तु का बन्धन ही संसार का बन्धन है; इसलिए वस्तु का बन्धन छूटा तो संसार का बन्धन भी छूटा । संसार का बन्धन छूटा यानी हमने मुक्ति की ओर अपना कदम बढ़ाया । यदि हम सिद्ध-परमात्मा के विषय में कुछ सोचें तो हमें विदित होगा कि वे सिद्ध हैं, हम असिद्ध हैं, वे छूट चुके हैं, हम बन्धन में हैं । हम राग के बन्धन में बँधे हुए हैं, वे राग का बन्धन तोड़कर ऊपर चले गये हैं ।

★ ★

जैन शासन में व्यक्ति की बाह्य-शुद्धि का इतना महत्त्व नहीं है, जितना अंतरंग-शुद्धि का । यदि अंतरंग अशुद्ध है, तो केवल बहिरंग-शुद्धि से कोई लाभ नहीं । लक्ष्य अंतरंग-शुद्धि का होना चाहिये । अंतरंग-शुद्धि का लक्ष्य बना कर बहिरंग शुद्धि की ओर ध्यान देना चाहिये । यदि ऐसा होगा तो जीवन अवश्य ही महान् बन जाएगा ।

★ ★

ज्ञानी कहते हैं कि यह जीव ज्ञाता-दृष्टा है । इसके ज्ञान और दर्शन पर आवरण छाया हुआ है । यदि यह आवरण हट जाए, तो जीव का मूल रूप प्रकट हो सकता है । यदि हम केवल देखें और जानें, तो हम भी ज्ञाता और दृष्टा बन सकते हैं; पर हम देखने और जानने के अलावा इष्ट वस्तु के प्रति राग और अनिष्ट के प्रति द्वेष करने लगते हैं । ऐसा मोह और अज्ञान के कारण होता है; इसलिए हमारा जानना और देखना सही नहीं है, अतः आवश्यक है कि हम अपने को सुदृष्टा बनायें ।

– जैनाचार्य श्रीमद् जयंतसेनसूरि 'मधुकर'

डॉ. शोभनाथ पाठक
एम.ए., (संस्कृत हिंदी), पी.एच.डी., साहित्यरत्न

भारत तथा मारिशस की प्रमुख पत्रपत्रिकाओं में लगभग तीन हजार लेख, निबंध आदि प्रकाशित । विविध विधाओं पर बीस पुस्तकों का प्रकाशन, दस प्रकाशनाधीन । अ.भा.प्राच्यविद्या परिषद के विगत अधिवेशनों में संबंधित विश्वविद्यालयों से शोधपत्र प्रकाशित । शोध-प्रबंध 'भगवान महावीर' के चतुर्थ संस्करण का हिंदी में प्रकाशन ।

सम्प्रति - म.प्र. शासन के हरिजन, आदिम, पिछडा वर्ग, कल्याण विभाग के सांस्कृतिक साहित्यिक प्रतिष्ठान वन्या प्रकाशन भोपाल में पदस्थ ।

निवास पता : ४६, फतेहगढ़ भोपाल.

पवन वेग से जा रहा, पल पल जीवन जान ।
जयन्तसेन विज्ञ बनो, समझो काल वितान ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org